गुरू नानकदेव जी का सामाजिक चिन्तन वर्तमान शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता

डॉ0 अमरजीत सिंह 'परिहार'
प्राचार्य, संकल्प इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन, गाजियाबाद (उ0प्र0)
Email: pariharsingh73@gmail.com

सुनीता
शोध छात्रा, मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राजस्थान)

डॉ0 एम0 के0 त्यागी,
मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राजस्थान)

प्राप्तिः 02.02.2021
स्वीकृतः 05.03.2021

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में गुरूनानक देव जी के सामाजिक चिन्तन की प्रासंगिकता का अध्ययन किया गया है। मध्यकाल में गुरू नानकदेव जी उत्तर भारतीय निर्गुण भक्ति आन्दोलन के अग्रदूत ही नहीं वरन् समाज में शोषित, उत्पीड़ित और उपेक्षित वर्ग की बहुसंख्यक जनता के प्रतिनिधि के रूप में हमारे सामने आए मध्यकाल जो भक्तिकाल का प्रतिबिम्ब है जिसमें दो विचार धाराओं ने जन्म लिया–सगुण और निर्गुण। सगुण के माध्यम से तत्कालीन व्यवस्था की दो परस्पर विरोधी सामाजिक–सांस्कृतिक शक्तियों की टकराहट भी व्यक्त हुई है, अतः भारतीय शिक्षा को स्पष्ट करने में गुरू नानकदेव जी की प्रासंगिकता को समझने के लिए भक्तिकाल की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक परिस्थितियों को समझना आवश्यक है। यहाँ इस विषय में पहले ही संकेत कर देना आवश्यक है कि मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन में निर्गुण–सगुण का द्वन्द्व मात्र दो धार्मिक मान्यताओं का या दो उपासना पद्धतियों का ही द्वन्द्व न होकर दो विरोधी वर्ग हितों और अभिरुचियों का सामाजिक–सांस्कृतिक संघर्ष भी था। अतः यहाँ निर्गुण और सगुण के दो अप्रतिम योद्धा गुरू नानकदेव जी और तुलसी की प्रासंगिकता की संक्षिप्त तुलना उपयोगी हो सकती है।

प्रस्तावना

आज के संदर्भ में गुरू नानकदेव जी और तुलसी की प्रासंगिकता पर विचार करते हुए हमारे सामने कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित होते हैं। पहला प्रश्न यह है कि इन दोनों का साहित्य किन सामाजिक वास्तविकताओं से उत्पन्न हुआ है अर्थात्

किन सामाजिक सांस्कृतिक शक्तियों ने अपने को उसमें प्रकट किया है? दोनों के आग्रह अनुरोध क्या हैं? समाज के विकास क्रम में और आज के संदर्भ में दोनों के प्रभाव क्या हैं? पहले प्रश्न की दृष्टि से देखा जाए तो गुरू नानकदेव जी साहित्य में तत्कालीन निम्नजातीय

उत्पीड़ित विवेक चेतना ने अपने को अभिव्यक्त किया था और तुलसी के साहित्य में एक सुधारवादी अभिजन् समुदाय की उदार चेतना ने अपने को अभिव्यक्त किया था। जहाँ तक दोनों के आग्रह और अनुरोधों का प्रश्न है, दोनों का साहित्य साधारण जनता के उद्धार की भावना से प्रेरित है। लेकिन तुलसीदास समाजस्थिति का विश्लेषण करते हुए सामाजिक दुर्दशा को कुलीन शासक वर्ग की दृष्टि से ही देख पाते हैं, गरीब, शोषित और निम्न वर्ग की दृष्टि से नहीं। उन्हें समाज, धर्म, राजनीति आदि सभी क्षेत्रों में फैली अराजकता, भागमभाग के कारण एक सच्चे संत महात्मा के रूप में दुःख होता है। लेकिन लोगों को दुःस्थिति से छुटकारे का उनके पास एक मात्र समाधान है, शास्त्र मतवादी पौराणिकता पर आधारित वर्णाश्रम धर्म की स्थापना। इसके विपरीत गुरू नानकदेव जी वर्णाश्रम धर्म और इससे उत्पन्न तमाम सारी सामाजिक विकृतियों की समाप्ति में ही साधारण जनता की मुक्ति का मार्ग देखते हैं।''

जब हम गुरू नानक देव जी के विचारों की वर्तमान में प्रसांगिकता की बात करते है तो हमें दो–कालों पर विचार करना है। एक वह काल जिसमें वे स्वयं रहे और दूसरा वर्तमान के सन्दर्भ में उनके विचार कितने प्रसांगिक है। मध्यकाल में समाज दो मुख्य वर्ग–समुदायों में विभक्त था। इनमें एक ओर मुट्ठी भर भू–स्वामी सामंतो और उनके निजी क्रियाकलापों से जुड़े हुए कुछ थोड़े से लोगों का वर्ग था तो दूसरी ओर किसान मजदूर और उनसे जुड़े हुए कारीगरों तथा तमाम सारे पेशेवर निम्न जातियों का विशाल वर्ग था। देश की अर्थव्यवस्था में उत्पादन प्रक्रिया इन्हीं दो वर्गों की क्रिया–प्रतिक्रिया द्वारा संचालित थी। इनमें प्रथम वर्ग उत्पादन कार्य से पूर्णतः कटकर उपभोक्ता मात्र रह गया था लेकिन द्वितीय वर्ग समाज के भौतिक उत्पादन से पूर्णतः जुड़ा हुआ था। यहाँ स्मरणीय बात है कि निर्गुण काव्यधारा के गुरू नानकदेव जी से लेकर रैदास, दादू, सेन, पीपा, दरिया, घना आदि अधिकांश संतकवि सद्गृहस्थ थे। इसके विपरीत अधिकांश सगुण भक्त गृहस्थ जीवन का परित्याग कर उपासना के क्षेत्र में आए थे। अतः उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक चेतना उत्पादन वर्ग से प्रायः भिन्न थी। फलस्वरूप निर्गुण और सगुण मतावलंबियों की साधारण जनता की मुक्ति से संबंधित परिकल्पनायें केवल भिन्न ही नहीं वरन सामाजिक स्तर पर परस्पर विरोधी भी थीं। गुरू नानकदेव जी के मध्यकालीन समाज में भौतिक मूल्यों के सृजन की मुख्य शक्ति के रूप में शोषित– पद्दलित निम्नवर्गीय जनसमुदाय ही सामाजिक प्रगति की आधारभूत शक्ति थी। इस विशाल जनसमुदाय की प्रगति पर ही समाज की वास्तविक प्रगति निर्भर करती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि समाज के निम्न वर्ग की पक्षधरता के माध्यम से गुरू नानकदेव जी ने अपनी प्रगतिकामी चेतना का परिचय देकर अपनी युगीन प्रासंगिकता भी सिद्ध की है

गुरू नानकदेव जी ने मध्यकालीन युग की जनविरोधी सामाजिक विसंगतियों पर जोरदार प्रहार किया है। वर्णाश्रम धर्म की मान्यता उस काल की अधिकांश विसंगतियों का ठोस आधार थी, जिसके परिणामस्वरूप अनेक सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक पाखण्डों, अंधविश्वासों, जातिवाद, छुआछूत, ऊँच–नीच आदि जैसी कुंठित भावनाओं को ठोस आधार मिल रहा था। समाज का एक विशाल जनसमुदाय वर्ण एवं जाति के आधार पर केवल धार्मिक दृष्टि से ही नहीं

वरन् सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से भी सभी अधिकारों से वंचित कर दिया गया था। इस विशाल जनसमुदाय की मुक्ति का पक्ष लेकर गुरू नानकदेव जी ने हिन्दू वर्णव्यवस्था पर करारी चोट करते हुए कहा है– नानक उत्तमु नीचु न कोई (जपु जी) संत साहित्य अपने युग की सामाजिक व्यवस्था का दर्पण है। उस काल में सामाजिक व्यवस्था का दर्पण है। उस काल में सामाजिक व्यवस्था का मेरूदण्ड वर्ण–व्यवस्था थी और इस वर्ण व्यवस्था का पोषण धर्म के द्वारा हो रहा था। समस्त निर्णयों का आधार धर्म–शास्त्र था परन्तु–देश का अधिकतर जनसमुदाय का एक बहुत बड़ा हिस्सा किसी भी प्रकार के धार्मिक अधिकारों से वंचित था। गुरू नानकदेव जी ने अनेक तर्कसंगत उक्तियों द्वारा शास्त्रों–पुराणों और धार्मिक अनुयायियों को पहली बार गंभीर चुनौती दी है। ब्राह्मणवाद का मुख्य आधार शास्त्र और अनेक विधिशास्त्रीय, कर्मकाण्ड थे, जिन पर गुरू नानकदेव जी ने खुलकर प्रहार किया। वेद, स्मृति, पुराण आदि की शास्त्रीय मान्यताओं के भेष में जिस वर्णवादी झूठी मर्यादा को लोक जीवन पर थोपा गया था उसे गुरू नानकदेव जी ने निर्भयतापूर्ण स्पष्ट किया है। तत्कालीन ब्राह्मण वर्चस्व वाले सम्भ्रान्त समाज के सामने उनकी यह गम्भीर चुनौती थी।

वर्तमान सामाजिक–सांस्कषतिक संदर्भों में गुरू नानकदेव जी चिन्तन की प्रासंगिकता पर विचार करते हुए मध्यकालीन समाजेतिहासिक संदर्भों के साथ ही साथ हमें हमारे वर्तमान जीवनादर्शों और मूल्यों को भी ध्यान में रखना होगा। हमारी सांस्कृतिक परम्परा में से आज हमारे लिए केवल वे ही भाव या विचार प्रासंगिक हैं, जो हमारे वर्तमान जीवन के आदर्शों तथा मूल्यों के विकास में सक्रिय योगदान में समर्थ हैं। वर्तमान समय में वर्णाश्रम व्यवस्था और उससे जुड़ी जाति–पांति, ऊँच नीच छुआ–छूत आदि के विरूद्ध उनका जोरदार अभियान हमारे लिए प्रासंगिक है। गुरू नानकदेव जी का अवतारवाद विरोधी रुख आज हमारे लिए कई दृष्टियों से प्रासंगिक है। गुरू नानक देव जी की निर्गुणोपासना अपने युग के लिए जितनी प्रंसागिक थी, उतनी ही आज भी है।

बीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में आज हमारे सामने राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की अनेक समस्यायें अपने समाधान के लिए मुँह खोलकर खड़ी हैं। आज ये काजी–मुल्ले और पण्डित–पुरोहित मस्जिद–मंदिर के अखाड़ों को छोड़कर संसद और संविधान को अपना अखाड़ा बना रहे हैं। अतः गुरू नानकदेव जी के धार्मिक जनवाद के स्थान पर आज राजनीतिक जनवाद द्वारा ही इस समस्या का समाधान संभव है। स्वतंत्र भारत के संविधान में मूल अधिकारो को प्राथमिकता दी गई जिसके द्वारा प्रत्येक वर्ग के लिए स्वतंत्रता और समानता दी गई है। मध्यकाल में गुरू नानकदेव जी ने इन मूल अधिकारों के सरंक्षण के लिए जोरदार अभियान चलाया, परन्तु उनका यह स्वप्न पूरा न हो सका। वर्तमान समय में यह मूल अधिकार वैधानिक दृष्टि से प्राप्त है, परन्तु देश का शोषित और पीड़ित जन समुदाय आज भी उनका लाभ नहीं उठा पा रहा है। अतः वर्तमान युग की इन सामाजिक विकृतियों के संदर्भ में गुरू नानक देव जी के विचारों को याद करना वर्तमान परिस्थितियों में प्रासंगिक एवं आवश्यक हैं।

भारतीय सामाजिक और सांस्कृतिक ढांचे में विविधता है। भारतीय इतिहास की बड़ी लम्बी श्रृंखला है जिसमें वर्तमान और भूतकाल की उपलब्धियां, चुनौतियों और आशायें एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। भारतीय समाज जहां विज्ञान और अंधविश्वासों, उच्च उपलब्धियों और आलस्य जनक, पिछड़ेपन आध्यात्मिक संवेदनशीलता और सामाजिक बुराईयों का एक अद्भूत मिश्रण है। कुछ क्षेत्रों में भारत अभी भी पिछड़ा हुआ है, लेकिन आज भी यहाँ परमाणु रिएक्टर हैं और अपनी बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नाभिक ऊर्जा के प्रयोग की उच्चाकांक्षा भी। वह विज्ञान और औद्योगिकी की दुनियां में अपना स्थान बनाना चाहता है परन्तु उनके पास सीमित साधन है। तकनीकी जानकारी की अपर्याप्तता है, और अधिकांश लोग पुराने अंधविश्वासों और रीति रिवाजों की बेड़ियों में जकड़े हुए हैं तथा उनमें निराशाजनक दरिद्रता भी है। उनमें समन्वय और एकता की प्रबल अभिलाषा है पर विभेदक प्रवृत्तियों का उस पर बोझ लदा है। उच्च आदर्शों से युक्त और भारी बोझों से दबे हम भारत वासियों के लिए उपयुक्त शिक्षा प्रणाली का रूप निर्धारित करना है। कुछ सुधारों के होते रहने पर भी भारत की शिक्षा प्रणाली आज भी अरचनात्मक और यंत्रवत् है जिससे न विद्यार्थी के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो पाता है और न समाज ही तर्कसंगत और मानवीय रूप अपना पाता है। भारत के विचारकों और शिक्षा विशारदों के लिए यह विषय अत्यधिक चिन्ताजनक रहा है। गुरू नानकदेव जी इन चिन्तकों में अग्रणीय हैं। उनके विचार उनके समय में भले ही असंगत माने गये हों लेकिन वे आज हम सबके लिए मार्गदर्शन करने में समर्थ हैं।

गुरू नानकदेव जी के युग में हिन्दू जाति अनेक अत्याचारों से पीड़ित थी और उनके जीवन में घोर निराशा व्याप्त थी। यह एक बहुत मुश्किल दौर था और अनीश्वरवादिता के प्रचार को बढ़ावा मिल सकता था। परन्तु गुरू नानकदेव जी ने ऐसा न होने दिया। उन्होंने निराकार एवं निर्गुण ईश्वर भक्ति की ओर जनमानस को मोड़ दिया। लोग निर्गुण भक्ति की ओर आकृष्ट हुए। सूफियों के शांतिप्रिय और आध्यात्मिक सिद्धान्त भी गुरू नानकदेव जी से मिलते–जुलते थे। अतएव गुरू नानकदेव जी को हिन्दू मुसलमान सभी से सहयोग प्राप्त होता गया।

गुरू नानकदेव जी ने सभी बाह्याडम्बरों का घोर विरोध किया और सच्चे धर्म की शिक्षाओं को सबके सम्मुख प्रस्तुत किया। सदाचरण प्रधान सहज धर्म की स्थापना की।

गुरू नानकदेव जी ने तत्कालीन समाज के परिप्रेक्ष्य में अपने विचारों को अपनी कृतियों के माध्यम से प्रकट किया है। गुरू नानकदेव जी का दर्शन बेजोड़ था, क्योंकि उसके अंदर ऐसे गूढ़ भाव छिपे हुए हैं जिन्हें यदि व्यवहार में लाया जाये तो वे निःसन्देह भारतीय समाज के लिए लाभप्रद सिद्ध होंगे तथा जो आज की शिक्षा व्यवस्था के लिए आवश्यक भी है।

गुरू नानकदेव जी ने तत्कालीन समय में दी जाने वाली विद्यालयी शिक्षा से संतुष्ट नहीं थे। उस समय का दर्शन विद्वानों में ही प्रचलित था। जनसाधारण का उससे कोई लेना–देना नहीं था। उस समय धार्मिक साहित्य संस्कृत भाषा में ही था। गुरू नानकदेव जी ने संस्कृत को छोड़कर जनवाणी में अपने उपदेशों का प्रचार किया ताकि वह जनामनस के पटल को झकझोर के रख दे। जटिल साधना पद्धतियों को गुरू नानकदेव जी ने सरल रूप में सामान्य जनता के

समक्ष रखा। गुरू नानकदेव जी द्वारा वर्णित शिक्षा सामान्य जनता में प्रचलित हुई। उनका ज्ञान भले ही शास्त्रीय परिभाषा के मापदण्डों पर खरा न उतरा हो, परन्तु जन सामान्य की कसौटी पर वह खरा उतरा और सामान्य जन के मन को उसने प्रभावित किया। गुरू नानकदेव जी की शिक्षा जनसाधारण द्वारा बोली जाने वाली भाषा की शिक्षा थी। उन्होंने जगत में रहते हुए लोक कल्याण के लिए निष्काम कर्म करने की प्रेरणा दी। सदाचरणशील बनकर लोक कल्याण में समाज को प्रोत्साहित किया और सद्भावना का संदेश देकर गुरू नानकदेव जी ने महान कल्याणकारी कार्य किया। विश्व–बन्धुत्व, मानवीय धर्म और साहित्यिक प्रेम की जो ज्योति गुरू नानकदेव जी ने जलायी थी वह युग युगान्तर तक मानव का पथ प्रदर्शन करती रहेगी।

गुरू नानकदेव जी ने जिस सामाजिक आदर्श की कल्पना की थी। वह अनेक संस्कृतियों का मिश्रित संस्करण था, सभी से सार रूप ग्रहण करके एक मिश्रित आदर्श की कल्पना की थी। वे एकमात्र सामाजिक एकता, एवं मानव धर्म के पक्षधर थे। मध्यकाल में भक्ति और ज्ञान एक दूसरे के पूरक न होकर उनके मध्य एक बहुत गहरी खांई थी। गुरू नानकदेव जी ने उसको पाटने का प्रयत्न किया। इसलिए गुरू नानकदेव जी के दर्शन का अध्ययन करने वाला यह निर्णय नहीं कर कर पाता है कि वह अच्छे भक्त थे अथवा एक अच्छे दार्शनिक। गुरू नानकदेव जी ने भिन्न–भिन्न संस्कृतियों का संग्रह किया है। उन्होंने विश्वबंधुत्व की भावना को सर्वोपरी रखा है और इसके लिए उन्होंने विश्व में कई उदासियां भी की और चारो तरफ अपने ज्ञान का प्रकाश फैलाया। गुरू नानकदेव जी का निर्गुण मत देश और काल की परिस्थितियों में आविर्भूत हुआ था।

आधुनिक समाज, धर्म की दृष्टि से पतन की ओर अग्रसर है। हम धर्म के मूल को भूलकर अर्थात् धर्म का अर्थ क्या है और यह हमें क्या सिखाता है को छोड़कर अपने को श्रेष्ठ सिद्ध करने में लगे हुए हैं जो कि आपसी टकराव का मुख्य कारण है हिन्दू और मुसलमान अपने–अपने धर्म को श्रेष्ठ कहते है। इसलिए हमारा समाज धार्मिक कलह की ओर अग्रसर हो रहा है। आज हमारी शिक्षा व्यवस्था को गुरू नानकदेव जी द्वारा उपदेशित सामाजिक आदर्श की आवश्यकता है।

आज के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व से नैतिकता का लोप होता जा रहा है। प्राचीन काल में सम्पूर्ण विद्यार्थी जीवन सदाचार और नैतिकता की धरातल पर अवलम्बित था और इसी कारण व्यक्ति इस लोक में सुख और शान्ति प्राप्त करता था और परलोक का मार्ग भी सुलभ कर लेता था। गुरू नानकदेव जी की नैतिकता सम्बन्धी बातें इतने समय बाद भी बहुत ही सार्थक है। आज केवल सिद्धान्त की बातें की जाती हैं, व्यवहार की नहीं। वर्तमान समय में गुरू नानकदेव जी के उपदेश हमारी शिक्षा व्यवस्था के लिए मार्गदर्शक का काम करेंगे।

आदर्शवादिता भारत की संस्कृति की पहचान है। आदर्शवादिता केवल बाह्य नहीं बल्कि आन्तरिक भी होनी चाहिए, आज इसकी आवश्यकता है। गुरू नानकदेव जी द्वारा जीवन के आदर्श के सम्बन्ध में व्यक्त किये गये विचार निःसन्देह शैक्षिक हैं, जिनका समावेश हमारी शैक्षिक व्यवस्था में होना चाहिए। तभी हम अपने प्राचीन मूल्यों को बनाए रख सकते हैं और दुनिया के

समक्ष स्वयं सच्चा होने का दावा कर सकते हैं। हमें अपने विद्यार्थियों में सच्चे आदर्शों को अपनाने की प्रेरणा देने की आवश्यकता है।

सम्पूर्ण विश्व की अनेकता में एकता की स्थापना ही उनके विचारों का आदर्श है। भिन्नता में एकता के दर्शन उनके आध्यात्मिक दृष्टिकोण की मौलिकता है। उनके सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा कला और शिक्षा सम्बन्धी विचारों का तात्पर्य है जीवन में एकता के दर्शन करना। वास्तव में गुरू नानकदेव जी का चिन्तन वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के लिए मील का पत्थर साबित होगा।

संदर्भ ग्रंथ

1. भाई,जोध सिंह,(1982), *गुरू नानक ते भारती धर्म दर्शन,* पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला।
2. सिंह दीवान, (2002), *गुरू नानक दर्शन,* रूही प्रकाशन, अमृतसर,पंजाब।
3. शर्मा नीलांबर (संपादक), (1970), *गुरू नानक अभिनंदन ग्रंथ,* जे एंड के अकादमी आसफ आर्ट, लैंगुएज एंड कल्चर, जम्मू।
4. सिंह शन,हरनाम (2015), *गुरू नानक बचनावली,* शिरोमणी गुरूद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर।
5. तिवारी, विश्वनाथ करांतीकारी (1991), *गुरू नानक,* पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़।
6. मिश्र, जयराम (2006), *नानक वाणी,* लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज।
7. पाण्डेय संगम लाल, *भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण,* सेन्ट्रल पब्लिषिंग हाउस, इलाहाबाद, तृतीय, 1999
8. बंदिश्टे डी0डी0, भारतीय दार्शनिक निबंध मध्य प्रदेष हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, तष्तीय 1995
9. गुप्त दीनदयाल, *तुलसीदर्शन* मीमांसा
10. मिश्र बलदेव प्रसाद, *तुलसी दर्शन,* हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
11. लाल, रमन विहारी *विश्व के श्रेष्ठ शैक्षिक चिन्तक,* आर0लाल पब्लि0, मेरठ (2017)
12. परिहार, अमरजीत सिंह एवं अन्य, *शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय आधार,* आर0लाल पब्लि0, मेरठ,(2012)